Chapter चवालीस

कंस वध

इस अध्याय में बतलाया गया है कि कृष्ण तथा बलराम ने किस तरह पहलवानों को मारा, कृष्ण ने किस तरह कंस को मारा और कैसे उसकी पत्नियों को ढाढ़स बँधाया और किस तरह दोनों भाई अपने माता-पिता से मिल सके।

कुश्ती लड़ने का निश्चय करके भगवान् कृष्ण चाणूर से भिड़ गये और भगवान् बलराम मुष्टिक से। वे बाँह से बाँह, सिर से सिर, घुटने से घुटना और छाती से छाती भिड़ा कर एक-दूसरे पर इतने कठोर प्रहार कर रहे थे कि ऐसा लगता था जैसे वे अपने शरीरों को भी क्षति पहुँचा रहे हों। अखाड़े में उपस्थित स्त्रियाँ इस भयंकर कुश्ती को देखकर राजा की तथा सारी सभा के सदस्यों की भर्त्सना यह कहकर करने लगीं, ''सम्माननीय दर्शकों को कभी भी ऐसी कुश्ती-प्रतियोगिता की अनुमति नहीं देनी चाहिए थी जिसमें वज्र जैसे देहधारी बड़े बड़े पहलवान ऐसे सुकुमार बालकों से जो युवावस्था में अभी पग धर रहे हों, लड़ने जा रहे हों। किसी भी बुद्धिमान मनुष्य को ऐसी किसी सभा में प्रवेश नहीं करना चाहिए जहाँ उसे अन्याय होता दिखाई दे।'' चूँकि वसुदेव तथा देवकी को कृष्ण तथा बलराम की शक्ति का पूरा-पूरा पता न था अत:जब उन्होंने स्त्रियों को इस तरह बातें करते सुना तो वे अत्यन्त दुखी हो उठे।

तब श्रीकृष्ण ने चाणूर की बाँहें पकड़कर कई बार घुमाकर जमीन पर पटक दिया जिससे वह मर गया। मुष्टिक का भी ऐसा ही अन्त हुआ—वह भगवान् बलराम की हथेली की जोरदार चोट खाकर रक्त वमन करता हुआ पृथ्वी पर गिरकर मर गया। तत्पश्चात् कूट, शल तथा तोशल नामक पहलवान आगे बढ़े किन्तु कृष्ण तथा बलराम ने मुक्कों तथा पाँवों से उन सबका वध कर दिया। जो पहलवान बचे रहे वे अपनी जान बचाकर भाग निकले।

कंस के अतिरिक्त वहाँ उपस्थित सबों ने कृष्ण तथा बलराम की जय-जयकार की। क्रुद्ध होकर कंस ने बज रहे बाजे को रोक दिया और आदेश दिया कि वसुदेव, नन्द, उग्रसेन तथा सारे ग्वालों को

कठोर दण्ड दिया जाय तथा कृष्ण तथा बलराम को सभा से खदेड़ दिया जाय। जब कृष्ण ने सुना कि कंस इस तरह बोल रहा है, तो वे अत्यन्त क्रुद्ध हो उठे और वे तुरन्त उच्च राजमंच पर कूद पड़े। उन्होंने कंस के बालों को पकड़ लिया और अखाड़े की फर्श पर पटक कर उसके ऊपर चढ़ गये। इस तरह कंस की मृत्यु हो गई। चूँकि कंस भयवश सदैव कृष्ण का स्मरण करता था अत: मृत्यु के बाद उसे सारूप्य मुक्ति प्राप्त हुई।

तब कंस के आठ भाइयों ने कृष्ण पर धावा बोल दिया किन्तु बलराम ने उन सबों को अपनी गदा से उसी तरह मार डाला जिस तरह सिंह निरीह पशुओं को मार डालता है। जब हर्षित देवों ने कृष्ण तथा बलराम पर फूलों की वर्षा की और उनके गुणों का कीर्तन करना शुरू किया, तो नगाड़ों की ध्वनि आकाश को गुँजा रही थी।

अपने पति के लिए शोक करती कंस-पत्नियाँ पछता रही थीं कि अन्य जीवों के प्रति हिंसा तथा समस्त ब्रह्माण्ड के सर्जक, पालनकर्ता तथा संहारकर्ता कृष्ण के प्रति अनादर के कारण ही कंस को इस तरह मरना पड़ा। भगवान् ने इन विधवाओं को ढाढ़स बँधाया, कंस तथा उसके भाइयों का दाह-संस्कार कराया और तब अपने माता-पिता को बन्दी-गृह से मुक्त किया। कृष्ण ने उनके चरणों को नमस्कार किया किन्तु वे अब समझ गये कि कृष्ण भगवान् हैं अत: उन्होंने उनका आलिंगन नहीं किया।

श्रीशुक उवाच
एवं चर्चितसङ्कल्पो भगवान्मधुसूदन: ।
आससादाथ चणूरं मुष्टितकं रोहिणीसुत: ॥ १ ॥

शब्दार्थ

श्री-शुक: उवाच—शुकदेव गोस्वामी ने कहा; एवम्—इस प्रकार; चर्चित—स्थिर करते हुए; सङ्कल्प:—अपना संकल्प; भगवान्—भगवान्; मधुसूदन:—कृष्ण ने; आससाद—मुठभेड़ की; अथ—तत्पश्चात्; चाणूरम्—चाणूर से; मुष्टिकम्—मुष्टिक से; रोहिणी-सुत:—रोहिणी के पुत्र, बलराम ने।

शुकदेव गोस्वामी ने कहा : इस तरह सम्बोधित किये जाने पर कृष्ण ने इस चुनौती को स्वीकार करने का मन बना लिया। उन्होंने चाणूर को और भगवान् बलराम ने मुष्टिक को अपना प्रतिद्वन्द्वी चुना।

हस्ताभ्यां हस्तयोर्बद्ध्वा पद्भ्यामेव च पादयो: ।

विचकर्षतुरन्योन्यं प्रसह्य विजिगीषया ॥ २॥

शब्दार्थ

हस्ताभ्याम्—हाथों से; हस्तयोः—हाथों द्वारा; बद्ध्वा—पकड़कर; पद्भ्याम्—पाँवों से; एव च—भी; पादयोः—अपने पैरों से; विचकर्षतुः—वे घसीटने लगे (कृष्ण चाणूर को तथा बलराम मुष्टिक को); अन्योन्यम्—एक-दूसरे को; प्रसह्य—बलपूर्वक; विजिगीषया—विजय की इच्छा से।

एक-दूसरे के हाथों को पकड़ कर और एक-दूसरे के पाँवों को फँसा कर ये प्रतिद्वन्द्वी विजय की अभिलाषा से बलपूर्वक संघर्ष करने लगे।

अरत्नी द्वे अरत्निभ्यां जानुभ्यां चैव जानुनी ।
शिरः शीर्ष्णोरसोरस्तावन्योन्यमभिजघ्नतुः ॥ ३॥

शब्दार्थ

अरत्नी—मुट्ठियों के विरुद्ध; द्वे—दो; अरत्निभ्याम्—उनकी मुट्ठियों से; जानुभ्याम्—उनके घुटनों से; च एव—भी; जानुनी—विपक्षी के घुटनों के विरुद्ध; शिरः—सिर; शीर्ष्णा—सिर से; उरसा—छाती से; उरः—छाती; तौ—वे जोड़ियाँ; अन्योन्यम्—एक-दूसरे पर; अभिजघ्नतुः—प्रहार करने लगीं।

वे एक-दूसरे से मुट्ठियों से मुट्ठियाँ, घुटनों से घुटनें, सिर से सिर तथा छाती से छाती भिड़ा कर प्रहार करने लगे।

तात्पर्य : इस श्लोक में आया हुआ *अरत्नी* शब्द कुहनी तथा मुट्ठी दोनों का सूचक हो सकता है। इस तरह शायद कुहनियों से भी प्रहार किया गया जैसाकि आज विविध सैन्य-कलाओं में देखा जाता है।

परिभ्रामणविक्षेपपरिरम्भावपातनैः ।
उत्सर्पणापसर्पणैश्चान्योन्यं प्रत्यरुन्धताम् ॥ ४॥

शब्दार्थ

परिभ्रामण—एक-दूसरे के चारों ओर घूमते हुए; विक्षेप—धक्का देते; परिरम्भ—कुचलते; अवपातनैः—तथा नीचे गिराते हुए; उत्सर्पण—छोड़कर फिर दौड़ना; अपसर्पणैः—पीछे जाकर; च—तथा; अन्योन्यम्—एक-दूसरे को; प्रत्यरुन्धताम्—प्रतिरोध या बचाव करने लगे।

प्रत्येक कुश्ती लड़ने वाला अपने विपक्षी को खींचकर चक्कर लगवाता, धक्के देकर उसे नीचे गिरा देता (पटक देता) और उसके आगे तथा पीछे दौड़ता।

तात्पर्य : श्रील श्रीधर स्वामी बतलाते हैं कि *परिरम्भ* शब्द सूचित करता है प्रतिपक्षी को बाहुओं के बीच में पकड़कर मसल देना।

उत्थापनैरुन्नयनैश्चालनैः स्थापनैरपि ।
परस्परं जिगीषन्तावपचक्रतुरात्मनः ॥ ५ ॥

शब्दार्थ

उत्थापनैः—ऊपर उठा लेने से; उन्नयनैः—कंधे पर उठाने से; चालनैः—आगे धकेलने से; स्थापनैः—एक स्थान पर अटका देने से; अपि—भी; परस्परम्—एक-दूसरे को; जिगीषन्तौ—विजय चाहते हुए; अपचक्रतुः—हानि पहुँचाया; आत्मनः—अपने आप तक को।

एक-दूसरे को बलपूर्वक उठाकर, ले जाकर, धकेलकर तथा पकड़कर, कुश्ती लड़ने वाले विजय की महती आकांक्षा से अपने शरीरों को भी चोट पहुँचा बैठते।

तात्पर्य : श्रील जीव गोस्वामी बतलाते हैं कि यद्यपि कृष्ण तथा बलराम ने निश्चय ही अपने शरीरों को चोट नहीं आने दी किन्तु चाणूर, मुष्टिक तथा अन्य संसारी लोगों को उन्हें चोट लगती दिख रही थी। दूसरे शब्दों में, दोनों ही भाई कुश्ती की लीला में मग्न थे।

तद्बलाबलवद्युद्धं समेताः सर्वयोषितः ।
ऊचुः परस्परं राजन्सानुकम्पा वरूथशः ॥ ६ ॥

शब्दार्थ

तत्—वह; बल-अबल—बली तथा निर्बल; वत्—के बीच; युद्धम्—लड़ाई; समेताः—एकत्र; सर्व—सभी; योषितः—स्त्रियों ने; ऊचुः—कहा; परस्परम्—एक-दूसरे से; राजन्—हे राजन् (परीक्षित); स-अनुकम्पाः—दया का अनुभव करती; वरूथशः—झुंड की झुंड।

हे राजन्, वहाँ पर उपस्थित सारी स्त्रियों ने बलवान् तथा निर्बल के बीच होने वाली इस अनुचित लड़ाई पर विचार करते हुए दया के कारण अत्यधिक चिन्ता का अनुभव किया। वे अखाड़े के चारों ओर झुंड की झुंड एकत्र हो गईं और परस्पर इस तरह बातें करने लगीं।

महानयं बताधर्म एषां राजसभासदाम् ।
ये बलाबलवद्युद्धं राज्ञोऽन्विच्छन्ति पश्यतः ॥ ७ ॥

शब्दार्थ

महान्—महान; अयम्—यह; बत—हाय; अधर्मः—अधर्म का कार्य; एषाम्—इनके लिए; राज-सभा—राजा की सभा में; सदाम्—उपस्थित लोग; ये—जो; बल-अबल-वत्—बली तथा निर्बल के बीच; युद्धम्—युद्ध; राज्ञः—जबकि राजा; अन्विच्छन्ति—वे भी चाहते हैं; पश्यतः—देख रहा है।

[स्त्रियों ने कहा] हाय! इस राजसभा के सदस्य यह कितना बड़ा अधर्म कर रहे हैं! जिस तरह राजा बलवान् तथा निर्बल के मध्य इस युद्ध को देख रहा है, वे भी उसी तरह इसे देखना चाहते हैं।

तात्पर्य : स्त्रियाँ जो भाव व्यक्त कर रही हैं वह यह है कि यदि राजा किसी कारणवश ऐसी

अन्यायपूर्ण प्रतियोगिता को देखना चाहता था, परंतु इस सभा के सम्मानित सदस्य उसे क्यों देखना चाह रहे हैं? ये भाव स्वाभाविक हैं। आज भी किसी सार्वजनिक स्थान में जब हम किसी हृष्ट-पुष्ट, लम्बे-चौड़े व्यक्ति को किसी दुर्बल छोटे-से व्यक्ति से लड़ते देखते हैं, तो वितृष्णा उत्पन्न होती है। विशेष रूप से दयालु स्त्रियाँ ऐसी अनीतिपूर्ण हिंसा से तिलमिला उठती हैं।

क्व वज्रसारसर्वाङ्गौ मल्लौ शैलेन्द्रसन्निभौ ।
क्व चातिसुकुमाराङ्गौ किशोरौ नाप्तयौवनौ ॥ ८ ॥

शब्दार्थ

क्व—कहाँ तो; वज्र—वज्र के; सार—बल से; सर्व—सभी; अङ्गौ—अंग वाले; मल्लौ—कुश्ती लड़ने वाले दोनों; शैल—पर्वत; इन्द्र—प्रधान की तरह; सन्निभौ—जिनके स्वरूप; क्व—कहाँ; च—तथा; अति—अत्यन्त; सु-कुमार—कोमल; अङ्गौ—अंग वाले; किशोरौ—दोनों किशोर; न आप्त—अभी भी प्राप्त नहीं किया; यौवनौ—युवावस्था।

कहाँ ये वज्र जैसे पुष्ट अंगों वाले तथा शक्तिशाली पर्वतों जैसे शरीर वाले दोनों पेशेवर पहलवान और कहाँ ये सुकुमार अंगों वाले किशोर अल्प-वयस्क बालक?

धर्मव्यतिक्रमो ह्यस्य समाजस्य ध्रुवं भवेत् ।
यत्राधर्मः समुत्तिष्ठेन्न स्थेयं तत्र कर्हिचित् ॥ ९ ॥

शब्दार्थ

धर्म—धर्म का; व्यतिक्रमः—उल्लंघन; हि—निस्सन्देह; अस्य—इस; समाजस्य—समाज का; ध्रुवम्—निश्चित रूप से; भवेत्—होगा; यत्र—जिसमें; अधर्मः—अधर्म; समुत्तिष्ठेत्—पूरी तरह उदित हुआ है; न स्थेयम्—नहीं रहना चाहिए; तत्र—वहाँ; कर्हिचित्—क्षण-भर भी।

इस सभा में धर्म का निश्चय ही अति-क्रमण हो चुका है। जहाँ अधर्म पल रहा हो उस स्थान में एक पल भी नहीं रुकना चाहिए।

न सभां प्रविशेत्प्राज्ञः सभ्यदोषाननुस्मरन् ।
अब्रुवन्विब्रुवन्नज्ञो नरः किल्बिषमश्नुते ॥ १० ॥

शब्दार्थ

न—नहीं; सभाम्—सभा में; प्रविशेत्—प्रवेश करे; प्राज्ञः—चतुर व्यक्ति; सभ्य—सभा के सदस्यों की; दोषान्—पापपूर्ण त्रुटियों को; अनुस्मरन्—मन में लाते हुए; अब्रुवन्—न बोलते हुए; विब्रुवन्—गलत बोलते हुए; अज्ञः—अज्ञानी (या बनने वाला); नरः—मनुष्य; किल्बिषम्—पाप; अश्नुते—करता है।

बुद्धिमान व्यक्ति को चाहिए कि यदि वह जान ले कि किसी सभा के सभासद अनुचित कार्य कर रहे हैं, तो वह उस सभा में प्रवेश न करे। और यदि ऐसी सभा में प्रवेश कर लेने पर वह सत्यभाषण करने से चूक जाता है, या मिथ्या भाषण करता है या अज्ञानता की दुहाई देता है, तो

वह निश्चित ही पाप का भागी बनता है।

वल्गतः शत्रुमभितः कृष्णस्य वदनाम्बुजम् ।
वीक्ष्यतां श्रमवार्युप्तं पद्मकोशमिवाम्बुभिः ॥ ११ ॥

शब्दार्थ

वल्गतः—कूदते हुए; शत्रुम्—अपने शत्रु को; अभितः—चारों ओर; कृष्णस्य—कृष्ण का; वदन—मुख; अम्बुजम्—कमलवत्; वीक्ष्यताम्—जरा देखो तो; श्रम—थकान के; वारि—जल से; उप्तम्—आच्छादित; पद्म—कमल के फूल के; कोशम्—दलपुंज; इव—सदृश; अम्बुभिः—जल की बूँदों से।

अपने शत्रु के चारों ओर उछलते-कूदते कृष्ण के कमलमुख को तो जरा देखो! भीषण लड़ाई लड़ने से आये हुए पसीने की बूँदों से ढका यह मुख ओस से आच्छादित कमल जैसा लग रहा है।

किं न पश्यत रामस्य मुखमाताम्रलोचनम् ।
मुष्टिकं प्रति सामर्षं हाससंरम्भशोभितम् ॥ १२ ॥

शब्दार्थ

किम्—क्यों; न पश्यत—नहीं देखती; रामस्य—बलराम के; मुखम्—मुख को; आताम्र—ताँबे जैसी; लोचनम्—आँखों वाले; मुष्टिकम्—मुष्टिक के; प्रति—प्रति; स-अमर्षम्—क्रोध से युक्त; हास—अपनी हँसी; संरम्भ—तथा अपनी तल्लीनता से; शोभितम्—शोभा पा रहे।

क्या तुम भगवान् बलराम के मुख को नहीं देख रही हो जो मुष्टिक के प्रति उनके क्रोध के कारण ताँबे जैसी लाल लाल आँखों से युक्त है और जिसकी शोभा उनकी हँसी तथा युद्ध में उनकी तल्लीनता के कारण बढ़ी हुई है?

पुण्या बत व्रजभुवो यदयं नृलिङ्ग-
गूढः पुराणपुरुषो वनचित्रमाल्यः ।
गाः पालयन्सहबलः क्वणयंश्च वेणुं
विक्रीदयाञ्चति गिरित्ररमार्चिताङ्घ्रिः ॥ १३ ॥

शब्दार्थ

पुण्याः—पवित्र; बत—निस्सन्देह; व्रज-भुवः—व्रज-भूमि के विविध भाग; यत्—जिसमें; अयम्—यह; नृ—मनुष्य के; लिङ्ग—गुणों से; गूढः—छिपा; पुराण-पुरुषः—आदि-भगवान्; वन—फूलों तथा वनस्पतियों से बनी; चित्र—अद्भुत प्रकार की; माल्यः—मालाएँ; गाः—गौवें; पालयन्—चराते हुए; सह—साथ में; बलः—बलराम; क्वणयन्—बजाते; च—तथा; वेणुम्—अपनी वंशी; विक्रीडया—विविध लीलाओं से; अञ्चति—इधर-उधर घूमता है; गिरित्र—शिवजी; रमा—लक्ष्मीजी द्वारा; अर्चित—पूजित; अङ्घ्रिः—चरण।

व्रज के भूमि-खण्ड कितने पवित्र हैं जहाँ आदि-भगवान् मनुष्य के वेश में विचरण करते

हुए अनेक लीलाएँ करते हैं। जो नाना प्रकार की वनमालाओं से अद्‌भुत ढंग से विभूषित हैं एवं जिनके चरण शिवजी तथा देवी रमा द्वारा पूजित हैं, वे बलराम के साथ गौवें चराते हुए अपनी वंशी बजाते हैं।

तात्पर्य : इस श्लोक में दर्शकों में से भक्त महिलाएँ मथुरा तथा वृन्दावन के अन्तर को इंगित कर रही हैं। वे यह बताना चाह रही हैं कि वृन्दावन में कृष्ण अपनी सखियों तथा मित्रों के साथ केवल आनन्द लूटते हैं जबकि यहाँ मथुरा में उन्हें पेशेवर पहलवानों के साथ भिड़ाकर सताया जा रहा है। इस तरह ये स्त्रियाँ मथुरा नगरी की भर्त्सना कर रही हैं क्योंकि अनैतिक कुश्ती-प्रतियोगिता में कृष्ण को देखकर उन्हें पीड़ा हो रही है। निस्सन्देह मथुरा भी भगवान् के नित्य धामों में से एक है किन्तु इस सभा में स्त्रियाँ अपना प्रेम आलोचनात्मक मनोभावों में अभिव्यक्त कर रही हैं।

गोप्यस्तपः किमचरन्यदमुष्य रूपं
लावण्यसारमसमोर्ध्वमनन्यसिद्धम् ।
दृग्भिः पिबन्त्यनुसवाभिनवं दुराप-
मेकान्तधाम यशसः श्रीय ऐश्वरस्य ॥ १४॥

शब्दार्थ

गोप्यः—गोपियों ने; तपः—तपस्या; किम्—कौन-सी; अचरन्—सम्पन्न की; यत्—जिससे; अमुष्य—ऐसे (कृष्ण) के; रूपम्—स्वरूप को; लावण्य-सारम्—सुन्दरता के सार; असम-ऊर्ध्वम्—जिसकी समता न की जा सके या जिसको पछाड़ा न जा सके; अनन्य-सिद्धम्—किसी अन्य आभूषण से पूरा न होने वाला (आत्म-सिद्ध); दृग्भिः—आँखों से; पिबन्ति—पीती हैं; अनुसव-अभिनवम्—निरन्तर नवीन; दुरापम्—प्राप्त करना कठिन; एकान्त-धाम—एकमात्र धाम; यशसः—यश का; श्रियः—सौन्दर्य का; ऐश्वरस्य—ऐश्वर्य का।

आखिर गोपियों ने कौन-सी तपस्याएँ की होंगी? वे निरन्तर अपनी आँखों से कृष्ण के उस रूप का अमृत-पान करती हैं, जो लावण्य का सार है और जिसकी न तो बराबरी हो सकती है न ही जिससे बढ़कर और कुछ है। वही लावण्य सौन्दर्य, यश तथा ऐश्वर्य का एकमात्र धाम है। यह स्वयंसिद्ध, नित्य नवीन तथा अत्यन्त दुर्लभ है।

तात्पर्य : इस श्लोक के शब्दार्थ तथा भावार्थ श्रील प्रभुपाद कृत *श्रीचैतन्य-चरितामृत* (आदि ४.१५६) से लिये गये हैं।

या दोहनेऽवहनने मथनोपलेप-
प्रेङ्खेङ्खनार्भरुदितोक्षणमार्जनादौ ।

गायन्ति चैनमनुरक्तधियोऽश्रुकण्ठ्यो
धन्या व्रजस्त्रिय उरुक्रमचित्तयानाः ॥ १५ ॥

शब्दार्थ

याः—जो (गोपियाँ); दोहने—दुहते समय; अवहनने—कूटते; मथन—मथते हुए; उपलेप—लेप करते; प्रेङ्ख—झूलों पर; इङ्खन—झूलते; अर्भ-रुदित—रोते शिशुओं (की देखभाल करते); उक्षण—छिड़कते; मार्जन—धोते हुए; आदौ—इत्यादि; गायन्ति—गाती हैं; च—तथा; एनम्—उससे; अनुरक्त—अत्यधिक अनुरक्त; धियः—मन; अश्रु—अश्रु सहित; कण्ठ्यः—गले; धन्याः—भाग्यशाली; व्रज-स्त्रियः—व्रज की स्त्रियाँ; उरुक्रम—कृष्ण की; चित्त—चेतना से; यानाः—इच्छित की प्राप्ति।

व्रज की स्त्रियाँ परम भाग्यशाली हैं क्योंकि कृष्ण के प्रति पूर्णतया अनुरक्त चित्तों से तथा अश्रुओं से सदैव अवरुद्ध कण्ठों से वे गौवें दुहते, अनाज कूटते, मक्खन मथते, ईंधन के लिए गोबर एकत्र करते, झूलों पर झूलते, अपने रोते बालकों की देखरेख करते, फर्श पर जल छिड़कते, अपने घरों को बुहारते इत्यादि के समय निरन्तर उनके गुणों का गान करती हैं। अपनी उच्च कृष्ण-चेतना के कारण वे समस्त वाँछित वस्तुएँ स्वतः प्राप्त कर लेती हैं।

प्रातर्व्रजाद्व्रजत आविशतश्च सायं
गोभिः समं क्वणयतोऽस्य निशम्य वेणुम् ।
निर्गम्य तूर्णमबलाः पथि भूरिपुण्याः
पश्यन्ति सस्मितमुखं सदयावलोकम् ॥ १६ ॥

शब्दार्थ

प्रातः—प्रातःकाल; व्रजात्—व्रज से; व्रजतः—जाने वाले का; आविशतः—प्रवेश करते; च—तथा; सायम्—संध्या-समय; गोभिः समम्—गौवों के साथ; क्वणयतः—बजाते हुए; अस्य—इसकी; निशम्य—सुनकर; वेणुम्—बाँसुरी को; निर्गम्य—बाहर निकलकर; तूर्णम्—तेजी से; अबलाः—स्त्रियाँ; पथि—मार्ग पर; भूरि—अत्यन्त; पुण्याः—पवित्र; पश्यन्ति—देखती हैं; स—सहित; स्मित—हँसते हुए; मुखम्—मुख को; स-दय—दयामय; अवलोकम्—चितवनों से।

प्रातःकाल कृष्ण को अपनी गौवों के साथ व्रज से बाहर जाते या संध्या-समय उनके साथ लौटते हुए और अपनी बाँसुरी को बजाते हुए जब गोपियाँ सुनती हैं, तो उन्हें देखने के लिए वे अपने अपने घरों से तुरन्त बाहर निकल आती हैं। मार्ग पर चलते समय, उन पर दयापूर्ण दृष्टि डालते हुए उनके हँसी से पूर्ण मुख को देखने में सक्षम होने के लिए, उन सबों ने अवश्य ही अनेक पुण्य-कर्म किये होंगे।

एवं प्रभाषमाणासु स्त्रीषु योगेश्वरो हरिः ।
शत्रुं हन्तुं मनश्चक्रे भगवान्भरतर्षभ ॥ १७ ॥

शब्दार्थ

एवम्—इस प्रकार; प्रभाषमाणासु—बोलती हुई; स्त्रीषु—स्त्रियों के; योग-ईश्वरः—समस्त योग-शक्ति के स्वामी; हरिः—कृष्ण ने; शत्रुम्—अपने शत्रु को; हन्तुम्—मारने के लिए; मनः चक्रे—अपना मन बनाया; भगवान्—भगवान्; भरत-ऋषभ—हे भरत-श्रेष्ठ।

[शुकदेव गोस्वामी ने आगे कहा] हे भरत-श्रेष्ठ, जब स्त्रियाँ इस तरह बोल रही थीं तो समस्त योग-शक्ति के स्वामी भगवान् कृष्ण ने अपने शत्रु को मार डालने का निश्चय कर लिया।

सभयाः स्त्रीगिरः श्रुत्वा पुत्रस्नेहशुचातुरौ ।
पितरावन्वतप्येतां पुत्रयोरबुधौ बलम् ॥ १८ ॥

शब्दार्थ

स-भयाः—भयभीत; स्त्री—स्त्रियों के; गिरः—शब्द; श्रुत्वा—सुनकर; पुत्र—अपने पुत्रों के; स्नेह—स्नेह से; शुच—शोक से; आतुरौ—विह्वल; पितरौ—उनके माता-पिता (देवकी तथा वसुदेव); अन्वतप्येताम्—सन्ताप का अनुभव करते; पुत्रयोः—अपने दोनों पुत्रों के; अबुधौ—न जानते हुए; बलम्—बल को।

दोनों भगवानों पर स्नेह होने के कारण उनके माता-पिता (देवकी तथा वसुदेव) ने जब स्त्रियों के भयपूर्ण वचन सुने तो वे शोक से विह्वल हो उठे। वे अपने पुत्रों के बल को न जानने के कारण सन्तप्त हो गए।

तात्पर्य : इस परिस्थिति में स्वाभाविक था, कृष्ण के माता-पिता द्वारा यह सोच रहे थे कि ''हमने अपने पुत्रों को घर में क्यों नहीं रखा? हमने उन्हें इस भ्रष्ट प्रदर्शन में भाग लेने की अनुमति क्यों दी'' पश्चाताप करने लगे।

तैस्तैर्नियुद्धविधिभिर्विविधैरच्युतेतरौ ।
युयुधाते यथान्योन्यं तथैव बलमुष्टिकौ ॥ १९ ॥

शब्दार्थ

तैः तैः—इन सबों से; नियुद्ध—कुश्ती लड़ने की; विधिभिः—विधियों से; विविधैः—नाना प्रकार की; अच्युत-इतरौ—अच्युत तथा उसके प्रतिद्वन्द्वी ने; युयुधाते—युद्ध किया; यथा—जिस तरह; अन्योन्यम्—एक-दूसरे से; तथा एव—उसी तरह; बल-मुष्टिकौ—बलराम तथा मुष्टिक।

भगवान् बलराम तथा मुष्टिक ने मल्लयुद्ध की अनेक शैलियों का कुशलतापूर्वक प्रदर्शन करते हुए एक-दूसरे से उसी तरह युद्ध किया जिस तरह कृष्ण तथा उनके प्रतिपक्षी ने किया।

भगवद्गात्रनिष्पातैर्वज्रनीष्पेषनिष्ठुरैः ।
चाणूरो भज्यमानाङ्गो मुहुर्ग्लानिमवाप ह ॥ २० ॥

शब्दार्थ

भगवत्—भगवान् का; गात्र—अंगों द्वारा; निष्पातैः—वारों से; वज्र—वज्र के; निष्पेष—धमाके की तरह; निष्ठुरैः—कठोर; चाणूरः—चाणूर; भज्यमान—भंग किया गया; अङ्गः—सारा शरीर; मुहुः—अधिकाधिक; ग्लानिम्—पीड़ा तथा थकान; अवाप ह—अनुभव किया।

भगवान् के अंगों से होने वाले कठोर वार चाणूर पर वज्रपात सदृश लग रहे थे जिससे उसके शरीर का अंग-प्रत्यंग चूर हो रहे थे और उसे अधिकाधिक पीड़ा तथा थकान उत्पन्न हो रही थी।

तात्पर्य : चाणूर की कुहनियाँ, भुजाएँ, घुटने तथा अन्य भाग निर्बल होते जा रहे थे।

स श्येनवेग उत्पत्य मुष्टीकृत्य करावुभौ ।
भगवन्तं वासुदेवं क्रुद्धो वक्षस्यबाधत ॥ २१ ॥

शब्दार्थ

सः—वह, चाणूर; श्येन—बाज की; वेगः—चाल से; उत्पत्य—उसपर टूटते हुए; मुष्टी—मुट्ठी, मुक्का; कृत्य—बाँधकर; करौ—हाथ; उभौ—दोनों; भगवन्तम्—भगवान्; वासुदेवम्—कृष्ण की; क्रुद्धः—क्रोधित; वक्षसि—वक्षस्थल पर; अबाधत—प्रहार किया।

क्रुद्ध चाणूर ने बाज की गति से भगवान् वासुदेव पर आक्रमण किया और उनकी छाती पर अपनी दोनों मुट्ठियों (घूँसों) से प्रहार किया।

तात्पर्य : ऐसा लगता है कि अपने को पराजित हुआ समझकर चाणूर क्रुद्ध हो उठा और भगवान् कृष्ण को हराने के लिए उसने अन्तिम प्रयास किया। उस असुर में अच्छे योद्धा का उत्साह तो था किन्तु उसके द्वारा यदि वह विजय की आशा कर रहा था, तो वह निश्चय ही ग़लत स्थान पर, ग़लत समय पर तथा ग़लत व्यक्ति से ऐसी आशा करता था॥

नाचलत्तत्प्रहारेण मालाहत इव द्विपः ।
बाह्वोर्निगृह्य चाणूरं बहुशो भ्रामयन्हरिः ॥ २२ ॥
भूपृष्ठे पोथयामास तरसा क्षीण जीवितम् ।
विस्रस्ताकल्पकेशस्त्रगिन्द्रध्वज इवापतत् ॥ २३ ॥

शब्दार्थ

न अचलत्—(कृष्ण) टस से मस नहीं हुए; तत्-प्रहारेण—उसके प्रहार से; माला—मालाओं से; आहत—मारा गया; इव—सदृश; द्विपः—हाथी; बाह्वोः—दो भुजाओं द्वारा; निगृह्य—पकड़कर; चाणूरम्—चाणूर को; बहुशः—अनेक बार; भ्रामयन्—घुमाकर; हरिः—भगवान् कृष्ण ने; भू—पृथ्वी के; पृष्ठे—ऊपर; पोथयाम् आस—फेंक दिया; तरसा—बलपूर्वक; क्षीण—रहित; जीवितम्—अपना जीवन; विस्रस्त—बिखरे; आकल्प—वस्त्र; केश—बाल; स्रक्—तथा फूल की माला; इन्द्र-ध्वजः—ऊँचा लट्ठा; इव—मानो; अपतत्—वह गिर पड़ा।

जिस तरह फूल की माला से मारने से हाथी कुछ भी नहीं होता उसी तरह असुर के बलशाली वारों से विचलित न होते हुए भगवान् कृष्ण ने चाणूर की भुजाओं को पकड़कर कई बार चारों

ओर घुमाया और उसे बड़े वेग से पृथ्वी पर पटक दिया। उसके वस्त्र, केश तथा माला बिखर गये और वह पहलवान पृथ्वी पर गिरकर मर गया मानो कोई विशाल उत्सव-स्तम्भ गिर पड़ा हो।

तात्पर्य : श्रील श्रीधर स्वामी ने *इन्द्रध्वज* शब्द की व्याख्या इस प्रकार की है : ''एक विशेष उत्सव पर बंगाल में आदमी के रूप में एक ऊँचा स्तम्भ खड़ा करके लोग उसे झंडियों आदि से सजाते हैं। चाणूर उसी तरह गिरा जिस तरह यह स्तम्भ गिरा हो।''

तथैव मुष्टिकः पूर्वं स्वमुष्ट्याभिहतेन वै ।
बलभद्रेण बलिना तलेनाभिहतो भृशम् ॥ २४॥
प्रवेपितः स रुधिरमुद्वमन्मुखतोऽर्दितः ।
व्यसुः पपातोर्व्युपस्थे वाताहत इवाङ्घ्रिपः ॥ २५॥

शब्दार्थ

तथा—भी; एव—इसी तरह; मुष्टिकः—मुष्टिक; पूर्वम्—इसके पहले; स्व-मुष्ट्या—अपने ही घूँसे से; अभिहतेन—प्रहार किया गया; वै—निस्सन्देह; बलभद्रेण—बलराम द्वारा; बलिना—बलशाली; तलेन—हथेली से; अभिहतः—प्रहार किया गया; भृशम्—तेजी से; प्रवेपितः—काँपते हुए; सः—वह, मुष्टिक; रुधिरम्—रक्त; उद्वमन्—वमन करता; मुखतः—मुँह से; अर्दितः—व्यथित; व्यसुः—प्राणरहित; पपात—गिर पड़ा; उर्वी—भूमि की; उपस्थे—गोद में; वात—वायु द्वारा; आहतः—गिराया गया; इव—सदृश; अङ्घ्रिपः—वृक्ष।

इसी प्रकार मुष्टिक पर भगवान् बलभद्र ने अपने मुक्के से प्रहार किया और उसका वध कर दिया। बलशाली भगवान् बलभद्र के हाथ का करारा थप्पड़ खाकर वह असुर भारी पीड़ा से काँपने लगा और रक्त वमन करने लगा। तत्पश्चात् निष्प्राण होकर जमीन पर उसी तरह गिर पड़ा जिस तरह हवा के झोंके से कोई वृक्ष धराशायी होता है।

ततः कूटमनुप्राप्तं रामः प्रहरतां वरः ।
अवधील्लीलया राजन्सावज्ञं वाममुष्टिना ॥ २६॥

शब्दार्थ

ततः—तब; कूटम्—कूट नामक असुर मल्ल; अनुप्राप्तम्—वहाँ पर प्रकट हुआ; रामः—बलराम ने; प्रहरताम्—योद्धाओं में; वरः—श्रेष्ठ; अवधीत्—मार डाला; लीलया—खेल खेल में; राजन्—हे राजा, परीक्षित; स-अवज्ञम्—उपेक्षित होकर; वाम—बायीं; मुष्टिना—मुट्ठी से।

इसके बाद कूट नामक पहलवान से योद्धाओं में श्रेष्ठ बलराम का सामना हुआ जिसे हे राजन्, उन्होंने अपनी बाईं मुट्ठी से खेल खेल में यों ही मार डाला।

तर्ह्येव हि शलः कृष्णप्रपदाहतशीर्षकः ।

द्विधा विदीर्णस्तोशलक उभावपि निपेततुः ॥ २७॥

शब्दार्थ

तर्हि एव—और तब; हि—निस्सन्देह; शलः—शल नामक मल्ल; कृष्ण—कृष्ण के; प्रपद—अँगूठे से; आहत—चोट खाकर; शीर्षकः—उसका सिर; द्विधा—दो टूक; विदीर्नः—फटा हुआ; तोशलक—तोशल; उभौ अपि—दोनों ही; निपेततुः—गिर पड़े।.

तत्पश्चात् कृष्ण ने अपने पाँव के अँगूठों से शल पहलवान के सिर पर प्रहार करके उसे दो फाड़ कर दिया। भगवान् ने तोशल के साथ भी इसी तरह किया और वे दोनों मल्ल धराशायी हो गये।

चाणूरे मुष्टिके कूटे शले तोशलके हते ।
शेषाः प्रदुद्रुवुर्मल्लाः सर्वे प्राणपरीप्सवः ॥ २८॥

शब्दार्थ

चाणूरे मुष्टिके कूटे—चाणूर, मुष्टिक तथा कूट के; शले तोशलके—शल तथा तोशल के; हते—मारे जाने पर; शेषाः—बचे हुए; प्रदुद्रुवुः—भाग गये; मल्लाः—पहलवान; सर्वे—सभी; प्राण—अपने प्राण; परीप्सवः—बचाने की आशा से।.

चाणूर, मुष्टिक, कूट, शल तथा तोशल के मारे जाने के बाद बचे हुए पहलवान अपनी जान बचाकर भाग लिये।

गोपान्वयस्यानाकृष्य तैः संसृज्य विजह्रतुः ।
वाद्यमानेषु तूर्येषु वल्गन्तौ रुतनूपुरौ ॥ २९॥

शब्दार्थ

गोपान्—ग्वालबाल; वयस्यान्—उनके वयस्क मित्रगण; आकृष्य—एकत्र करके; तैः—उनके साथ; संसृज्य—मिलकर; विजह्रतुः—खेला-कूदा; वाद्यमानेषु—बजाते हुए; तूर्येषु—तुरहियों में; वल्गन्तौ—दोनों नाचते हुए; रुत—प्रतिध्वनित करते हुए; नूपुरौ—अपने घुंघरू।.

तब कृष्ण तथा बलराम ने अपने समवयस्क ग्वालबाल सखाओं को अपने पास बुलाया और उनके साथ दोनों भगवानों ने खूब नाच किया और खेला। उनके घुंघरू वाद्य-यंत्रों की भान्ति ध्वनि करने लगे।

तात्पर्य : आजकल हम देखते हैं कि मुक्केबाजी-प्रतियोगिता में ज्योंही विजय की घोषणा की जाती है, विजयी मुक्केबाज के सभी मित्र तथा सम्बन्धी उसे बधाई देने के लिए उसके पास दौड़े आते हैं और प्रायः विजयी व्यक्ति परम हर्ष से नाचने लगता है। ठीक ऐसे ही कृष्ण तथा बलराम अपनी विजय मनाते हुए अपने मित्रों तथा सम्बन्धियों के साथ मिलकर खूब नाचे।

जनाः प्रजह्रषुः सर्वे कर्मणा रामकृष्णयोः ।
ऋते कंसं विप्रमुख्याः साधवः साधु साध्विति ॥ ३० ॥

शब्दार्थ

जनाः—लोगों ने; प्रजह्रषुः—खुशी मनाई; सर्वे—सभी; कर्मणा—इस कार्य से; राम-कृष्णयोः—बलराम तथा कृष्ण के; ऋते—सिवाय, अतिरिक्त; कंसम्—कंस के; विप्र—ब्राह्मणों के; मुख्याः—सर्वश्रेष्ठ; साधवः—सन्तपुरुष; साधु साधु इति—बहुत अच्छा! बहुत अच्छा! (कहकर चिल्ला पड़े)।

कंस के अतिरिक्त सभी व्यक्तियों ने कृष्ण तथा बलराम द्वारा सम्पन्न इस अद्भुत कृत्य पर हर्ष प्रकट किया। पूज्य ब्राह्मणों तथा महान् सन्तपुरुषों ने ''बहुत अच्छा, बहुत अच्छा,'' कहा।

तात्पर्य : ऐसा लगता है कि जब पूज्य ब्राह्मण तथा सन्तपुरुष ''बहुत अच्छा! बहुत अच्छा!'' कह रहे थे तो ब्राह्मणों में अधम, कंस के पुरोहित, भारीमन से शोक मना रहे थे।

हतेषु मल्लवर्येषु विद्रुतेषु च भोजराट् ।
न्यवारयत्स्वतूर्याणि वाक्यं चेदमुवाच ह ॥ ३१ ॥

शब्दार्थ

हतेषु—मारे गये; मल्ल-वर्येषु—श्रेष्ठ पहलवान; विद्रुतेषु—भगे हुए; च—तथा; भोज-राट्—भोजराज, कंस ने; न्यवारयत्—रोका; स्व—अपना; तूर्याणि—तुरहियाँ; वाक्यम्—शब्द; च—तथा; इदम्—यह; उवाच ह—कहा।

जब भोजराज ने देखा कि उसके सर्वश्रेष्ठ पहलवान या तो मारे जा चुके हैं अथवा भाग गये हैं, तो उसने वाद्य-यंत्रों को बजाना रूकवा दिया जो मूलतः उसके मनोविनोद के लिए बजाये जा रहे थे और इस प्रकार के शब्द कहे।

निःसारयत दुर्वृत्तौ वसुदेवात्मजौ पुरात् ।
धनं हरत गोपानां नन्दं बध्नीत दुर्मतिम् ॥ ३२ ॥

शब्दार्थ

निःसारयत—निकाल दो; दुर्वृत्तौ—दुर्व्यवहार करने वाले; वसुदेव-आत्मजौ—वसुदेव के दोनों पुत्रों को; पुरात्—नगरी से; धनम्—धन; हरत—छीन लो; गोपानाम्—ग्वालों का; नन्दम्—नन्द महाराज को; बध्नीत—बाँध दो; दुर्मतिम्—मूर्ख, दुष्ट।

[कंस ने कहा]: वसुदेव के दोनों दुष्ट पुत्रों को नगरी से बाहर निकाल दो। ग्वालों की सम्पत्ति छीन लो और उस मूर्ख नन्द को बन्दी बना लो।

वसुदेवस्तु दुर्मेधा हन्यतामाश्वसत्तमः ।
उग्रसेनः पिता चापि सानुगः परपक्षगः ॥ ३३ ॥

शब्दार्थ

वसुदेवः—वसुदेव; तु—भी; दुर्मेधा—दुर्बुद्धि; हन्यताम्—मार डाला जाय; आशु—तुरन्त; असत्-तमः—अशुद्ध में निकृष्ट; उग्रसेनः—उग्रसेन; पिता—मेरा पिता; च अपि—भी; स—सहित; अनुगः—अपने अनुचरों; पर—शत्रु का; पक्ष-गः—पक्ष लेने वाला।

उस अत्यन्त दुष्ट मूर्ख वसुदेव को मार डालो! और मेरे पिता उग्रसेन को भी उसके अनुयायियों सहित मार डालो क्योंकि उन सब ने हमारे शत्रुओं का पक्ष लिया है।

एवं विकत्थमाने वै कंसे प्रकुपितोऽव्ययः ।
लघिम्नोत्पत्य तरसा मञ्चमुत्तुङ्गमारुहत् ॥ ३४॥

शब्दार्थ

एवम्—इस प्रकार; विकत्थमाने—बढ़-बढ़कर बातें कर रहे; वै—निस्सन्देह; कंसे—कंस पर; प्रकुपितः—अत्यन्त क्रुद्ध हुए; अव्ययः—अच्युत भगवान् ने; लघिम्ना—आसानी से; उत्पत्य—उछलकर; तरसा—तेजी से; मञ्चम्—राजमंच पर; उत्तुङ्गम्—ऊँचे; आरुहत्—चढ़ गये।

जब कंस इस तरह दम्भ से गरज रहा था, तो अच्युत भगवान् कृष्ण अत्यन्त क्रुद्ध होकर तेजी के साथ सरलता से उछलकर ऊँचे राजमंच पर जा पहुँचे।

तमाविशन्तमालोक्य मृत्युमात्मन आसनात् ।
मनस्वी सहसोत्थाय जगृहे सोऽसिचर्मणी ॥ ३५॥

शब्दार्थ

तम्—उसे, कृष्ण को; आविशन्तम्—(निजी बैठक में) प्रवेश करते हुए; आलोक्य—देखकर; मृत्युम्—मृत्यु को; आत्मनः—अपनी; आसनात्—अपने आसन से; मनस्वी—प्रखर बुद्धिवाला; सहसा—तुरन्त; उत्थाय—उठकर; जगृहे—ले ली; सः—उसने; असि—अपनी तलवार; चर्मणी—तथा अपनी ढाल।

भगवान् कृष्ण को साक्षात् मृत्यु के समान आते देखकर प्रखर बुद्धिवाला कंस तुरन्त अपने आसन से उठ खड़ा हुआ और उसने अपनी तलवार तथा ढाल उठा ली।

तं खड्गपाणिं विचरन्तमाशु
श्येनं यथा दक्षिणसव्यमम्बरे ।
समग्रहीद्दुर्विषहोग्रतेजा
यथोरगं तार्क्ष्यसुतः प्रसह्य ॥ ३६॥

शब्दार्थ

तम्—उसे, कंस को; खड्ग—तलवार; पाणिम्—हाथ में लिए; विचरन्तम्—इधर-उधर घूमते; आशु—तेजी से; श्येनम्—बाज को; यथा—जिस तरह; दक्षिण-सव्यम्—दाएँ तथा बाएँ; अम्बरे—आकाश में; समग्रहीत्—पकड़ ले; दुर्विषह—दुस्सह; उग्र—तथा भयानक; तेजाः—जिनकी शक्ति; यथा—जिस तरह; उरगम्—साँप को; तार्क्ष्य-सुतः—तार्क्ष्य का पुत्र, गरुड़; प्रसह्य—बलपूर्वक।

हाथ में तलवार लिए कंस तेजी से एक ओर से दूसरी ओर भाग रहा था जिस तरह आकाश

में बाज हो। किन्तु दुस्सह भयानक शक्ति वाले भगवान् कृष्ण ने उस असुर को बलपूर्वक उसी तरह पकड़ लिया जिस तरह ताक्ष्र्य-पुत्र (गरुड़) किसी साँप को पकड़ लेता है।

प्रगृह्य केशेषु चलत्किरीतं
निपात्य रङ्गोपरि तुङ्गमञ्चात् ।
तस्योपरिष्टात्स्वयमब्जनाभः
पपात विश्वाश्रय आत्मतन्त्रः ॥ ३७॥

शब्दार्थ

प्रगृह्य—पकड़कर; केशेषु—बालों से; चलत्—ठोकर मार कर; किरीटम्—मुकुट को; निपात्य—फेंककर; रङ्ग-उपरि—अखाड़े के ऊपर; तुङ्ग—ऊँचे; मञ्चात्—मंच से; तस्य—उसके; उपरिष्टात्—ऊपर से; स्वयम्—स्वयं; अब्ज-नाभः—कमल-नाभ भगवान् ने; पपात—फेंक दिया; विश्व—ब्रह्माण्ड-भर के; आश्रयः—आधार; आत्म-तन्त्रः—स्वतंत्र।

कंस के बालों को पकड़कर तथा उसके मुकुट को ठोकर मारते हुए कमल-नाभ भगवान् ने उसे ऊँचे मंच से अखाड़े के फर्श पर फेंक दिया। तत्पश्चात् समस्त ब्रह्माण्ड के आश्रय, स्वतंत्र भगवान् उस राजा के ऊपर कूद पड़े।

तात्पर्य : श्रील प्रभुपाद ने ''भगवान् कृष्ण'' में कंस की मृत्यु का वर्णन इस प्रकार दिया है : ''कृष्ण ने तुरन्त अपना सीना तान लिया और बारम्बार उस पर प्रहार करने लगे। उनके घूँसे के प्रहारों से ही कंस के प्राण छूट गये।''

तं सम्परेतं विचकर्ष भूमौ
हरिर्यथेभं जगतो विपश्यतः ।
हा हेति शब्दः सुमहांस्तदाभू-
दुदीरितः सर्वजनैर्नरेन्द्र ॥ ३८॥

शब्दार्थ

तम्—उसको; सम्परेतम्—मृत; विचकर्ष—घसीटा; भूमौ—पृथ्वी पर; हरिः—सिंह; यथा—जिस तरह; इभम्—हाथी को; जगतः—सारे लोगों के; विपश्यतः—देखते देखते; हा हा इति—''हाय हाय'' इस प्रकार; शब्दः—ध्वनि; सु-महान्—विशाल; तदा—तब; अभूत्—उठी; उदीरितः—बोला गया; सर्व-जनैः—सभी लोगों के द्वारा; नर-इन्द्र—हे मनुष्यों के शासक (राजा परीक्षित)।

जिस तरह सिंह मृत हाथी को घसीटता है उसी तरह भगवान् ने वहाँ पर उपस्थित सारे लोगों के समक्ष जमीन पर कंस के मृत शरीर को घसीटा। हे राजन्, अखाड़े के सारे लोग तुमुल स्वर में ''हाय हाय'' चिल्ला उठे।

तात्पर्य : श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती बतलाते हैं कि दर्शकों में से अनेक लोगों ने सोचा कि उच्च मंच

से फेंके जाने से कंस केवल मूर्छित हुआ है। इसलिए भगवान् कृष्ण उसके शव को घसीटने लगे जिससे सारे लोग जान लें कि वह दुष्ट राजा मर चुका है। इस तरह *हा हा* सम्बोधन सूचित करता है कि लोग कितने चकित थे कि राजा सहसा मर गया है।

दर्शकों के आश्चर्य का उल्लेख विष्णु पुराण में भी मिलता है—

ततो हाहाकृतं सर्वमासीत् तद्रङ्गमण्डलम्।

अवज्ञया हतं दृष्ट्वा कृष्णेन मथुरेश्वरम्॥

''जब लोगों ने देखा कि कृष्ण द्वारा मथुरा-पति अवज्ञापूर्वक मार डाला गया है, तो सारा अखाड़ा आश्चर्य की चीत्कार से भर गया।''

स नित्यदोद्विग्नधिया तमीश्वरं
पिबन्नदन्वा विचरन्स्वपन्श्वसन् ।
ददर्श चक्रायुधमग्रतो यत-
स्तदेव रूपं दुरवापमाप ॥ ३९॥

शब्दार्थ

सः—उसने, कंस ने; नित्यदा—निरन्तर; उद्विग्न—चिन्तित; धिया—मन से; तम्—उस; ईश्वरम्—ईश्वर को; पिबन्—पानी पीते; अदन्—भोजन करते; वा—अथवा; विचरन्—घूमते हुए; स्वपन्—सोते हुए; श्वसन्—साँस लेते; ददर्श—देखा; चक्र—चक्र; आयुधम्—अपने हाथ में; अग्रतः—अपने समक्ष; यतः—क्योंकि; तत्—वह; एव—वही; रूपम्—साकार रूप को; दुरवापम्—दुर्लभ; आप—प्राप्त किया।

कंस इस विचार से सदैव विचलित रहता था कि भगवान् द्वारा उसका वध होने वाला है। अतः वह खाते, पीते, चलते, सोते, यहाँ तक कि साँस लेते समय भी भगवान् को अपने समक्ष हाथ में चक्र धारण किये देखा करता था। इस तरह कंस ने भगवान् जैसा रूप (सारूप्य) प्राप्त करने का दुर्लभ वर प्राप्त किया।

तात्पर्य : यद्यपि कंस द्वारा भगवान् का निरन्तर ध्यान भय से उत्पन्न था किन्तु इससे उसके सारे अपराध निर्मूल हो चुके थे अतः भगवान् के हाथों से मृत्यु होने के कारण उस असुर को मोक्ष प्राप्त हुआ।

तस्यानुजा भ्रातरोऽष्टौ कङ्कन्यग्रोधकादयः ।
अभ्यधावन्नतिक्रुद्धा भ्रातुर्निर्वेशकारिणः ॥ ४०॥

शब्दार्थ

तस्य—उसके, कंस के; अनुजाः—छोटे; भ्रातरः—भाई; अष्टौ—आठ; कङ्क-न्यग्रोधक-आदयः—कंक, न्यग्रोधक इत्यादि; अभ्यधावन्—आक्रमण करने दौड़े; अति-क्रुद्धाः—अत्यन्त क्रुद्ध होकर; भ्रातुः—अपने भाई के प्रति; निर्वेश—उऋण; कारिणः—होने के लिए।

तत्पश्चात् कंक, न्यग्रोधक इत्यादि कंस के आठ भाइयों ने क्रोध में आकर अपने भाई का बदला लेने के लिए उन दोनों भगवानों पर आक्रमण कर दिया।

तथातिरभसांस्तांस्तु संयत्तान्रोहिणीसुतः ।
अहन्परिघमुद्यम्य पशूनिव मृगाधिपः ॥ ४१ ॥

शब्दार्थ

तथा—इस तरह से; अति-रभसान्—तेजी से दौड़ते; तान्—उन्हें; तु—तथा; संयत्तान्—प्रहार करने के लिए उद्यत; रोहिणी-सुतः—रोहिणी-पुत्र बलराम ने; अहन्—मार गिराया; परिघम्—अपनी गदा; उद्यम्य—भाँज कर; पशून्—पशुओं को; इव—सदृश; मृग-अधिपः—पशुओं का राजा, सिंह।

ज्योंही आक्रमण करने के लिए तैयार होकर वे सभी उन दोनों भगवानों की ओर तेजी से दौड़े तो रोहिणी-पुत्र ने अपनी गदा से उन सबों को उसी तरह मार डाला जिस तरह सिंह अन्य पशुओं को आसानी से मार डालता है।

नेदुर्दुन्दुभयो व्योम्नि ब्रह्मेशाद्या विभूतयः ।
पुष्पैः किरन्तस्तं प्रीताः शशंसुर्ननृतुः स्त्रियः ॥ ४२ ॥

शब्दार्थ

नेदुः—बज उठीं; दुन्दुभयः—दुन्दुभियाँ; व्योम्नि—आकाश में; ब्रह्म-ईश-आद्याः—ब्रह्मा, शिव इत्यादि देवतागण; विभूतयः—अपने अंश; पुष्पैः—फूलों के द्वारा; किरन्तः—बिखेरते हुए; तम्—उस पर; प्रीताः—प्रसन्न; शशंसुः—उनकी प्रशंसा में गाना गाया; ननृतुः—नाचीं; स्त्रियः—उनकी पत्नियाँ।

जिस समय ब्रह्मा, शिव तथा भगवान् के अंश-रूप अन्य देवताओं ने हर्षित होकर उन पर फूलों की वर्षा की उस समय आकाश में दुन्दुभियाँ बज उठीं। वे सभी उनका यश-गान करने लगे और उनकी पत्नियाँ नाचने लगीं।

तेषां स्त्रियो महाराज सुहृन्मरणदुःखिताः ।
तत्राभीयुर्विनिघ्नन्त्यः शीर्षाण्यश्रुविलोचनाः ॥ ४३ ॥

शब्दार्थ

तेषाम्—उनकी (कंस तथा उसके भाइयों की); स्त्रियः—पत्नियाँ; महाराज—हे राजन् (परीक्षित); सुहृत्—शुभचिन्तकों (पत्नियों) के; मरण—मृत्यु के कारण; दुःखिताः—दुखित; तत्र—उस स्थान पर; अभीयुः—पहुँचे; विनिघ्नन्त्यः—पीटते हुए; शीर्षाणि—अपने सिर; अश्रु—आँसू से युक्त; विलोचनाः—उनकी आँखें।

हे राजन्, कंस तथा उसके भाइयों की पत्नियाँ अपने अपने शुभचिन्तक पतियों की मृत्यु से

शोकाकुल होकर अपने सिर पीटती हुई तथा आँखों में आँसू भरे वहाँ पर आईं।

शयानान्वीरशयायां पतीनालिङ्ग्य शोचतीः ।
विलेपुः सुस्वरं नार्यो विसृजन्त्यो मुहुः शुचः ॥ ४४॥

शब्दार्थ

शयानान्—लेटे हुए; वीर—वीर की; शयायाम्—शय्या पर (भूमि पर); पतीन्—अपने अपने पतियों को; आलिङ्ग्य—चूमकर; शोचतीः—शोक का अनुभव करतीं; विलेपुः—विलाप करने लगीं; सु-स्वरम्—जोर-जोर से; नार्यः—स्त्रियाँ; विसृजन्त्यः—गिराती हुई; मुहुः—बारम्बार; शुचः—आँसू।

वीरों की मृत्यु शय्या पर लेटे अपने पतियों का आलिंगन करते हुए शोकमग्न स्त्रियाँ आँखों से निरन्तर अश्रु गिराती हुईं जोर-जोर से विलाप करने लगीं।

हा नाथ प्रिय धर्मज्ञ करुणानाथवत्सल ।
त्वया हतेन निहता वयं ते सगृहप्रजाः ॥ ४५॥

शब्दार्थ

ह—हाय; नाथ—हे स्वामी; प्रिय—हे प्यारे; धर्म-ज्ञ—धर्म के ज्ञाता; करुण—हे दयावान्; अनाथ—बिना रक्षकों वाले के; वत्सल—हे दयालु; त्वया—तुम्हारे द्वारा; हतेन—मारे जाकर; निहताः—मारी जाती हैं; वयम्—हम; ते—तुम्हारे; स—सहित; गृह—घर; प्रजाः—तथा सन्तानों।

[स्त्रियाँ विलाप करने लगीं]: हाय! हे नाथ, हे प्रिय, हे धर्मज्ञ, हे आश्रयहीनों के दयालु रक्षक, तुम्हारा वध हो जाने से हम भी तुम्हारे घर तथा सन्तानों समेत मारी जा चुकी हैं।

त्वया विरहिता पत्या पुरीयं पुरुषर्षभ ।
न शोभते वयमिव निवृत्तोत्सवमङ्गला ॥ ४६॥

शब्दार्थ

त्वया—तुमसे; विरहिता—बिछुड़कर; पत्या—स्वामी से; पुरी—नगरी; इयम्—यह; पुरुष—पुरुषों में; ऋषभ—श्रेष्ठ वीर; न शोभते—शोभा नहीं देता; वयम्—हमको; इव—जिस तरह; निवृत्त—समाप्त; उत्सव—उत्सव; मङ्गला—तथा सौभाग्य।

हे पुरुषों में श्रेष्ठ वीर, यह नगरी अपने स्वामी तुमसे बिछुड़कर अपना सौन्दर्य उसी प्रकार खो चुकी है, जिस तरह हम खो चुकी हैं और इसके भीतर के सारे हर्षोल्लास तथा सौभाग्य का अन्त हो चुका है।

अनागसां त्वं भूतानां कृतवान्द्रोहमुल्बणम् ।
तेनेमां भो दशां नीतो भूतध्रुक्को लभेत शम् ॥ ४७॥

शब्दार्थ

अनागसाम्—निष्पाप, निरपराध; त्वम्—तुमने; भूतानाम्—प्राणियों के प्रति; कृतवान्—किया था; द्रोहम्—हिंसा; उल्बणम्—घोर; तेन—उसी से; इमाम्—इस; भो—हे प्रिय; दशाम्—दशा को; नीतः—लाये गये; भूत—जीवों के प्रति; ध्रुक्—क्षति पहुँचाते हुए; कः—कौन; लभेत—प्राप्त कर सकता है; शम्—सुख।

हे प्रिय, तुम्हारी यह दशा इसीलिए हुई है क्योंकि तुमने निर्दोष प्राणियों के प्रति घोर हिंसा की है। भला दूसरों को क्षति पहुँचाने वाला कैसे सुख पा सकता है?

तात्पर्य : अपनी भावपूर्ण व्यथा व्यक्त करने के पश्चात् स्त्रियाँ अब व्यावहारिक बुद्धिमत्ता की बात करने लगती हैं। अब वे सभी वस्तुओं को वास्तविकता से देखने लगी हैं क्योंकि उनके मन हाल की घटनाओं के दु:ख से और भगवान् की संगति से शुद्ध हो गए थे।

सर्वेषामिह भूतानामेष हि प्रभवाप्ययः ।
गोप्ता च तदवध्यायी न क्वचित्सुखमेधते ॥ ४८ ॥

शब्दार्थ

सर्वेषाम्—समस्त; इह—इस जगत में; भूतानाम्—जीवों का; एषः—यह (कृष्ण); हि—निश्चय ही; प्रभव—उद्गम; अप्ययः—तथा तिरोधान; गोप्ता—पालक; च—तथा; तत्—उसका; अवध्यायी—उपेक्षा करने वाला; न क्वचित्—कभी नहीं; सुखम्—सुखपूर्वक; एधते—फूलता-फलता है।

भगवान् कृष्ण इस जगत में सारे जीवों को प्रकट करते हैं और उनका संहार करने वाले हैं। साथ ही वे उनके पालनकर्ता भी हैं। जो उनका अनादर करता है, वह कभी भी सुखपूर्वक फल-फूल नहीं सकता।

श्रीशुक उवाच

राजयोषित आश्वास्य भगवाँल्लोकभावनः ।
यामाहुर्लौकिकीं संस्थां हतानां समकारयत् ॥ ४९ ॥

शब्दार्थ

श्री-शुकः उवाच—शुकदेव गोस्वामी ने कहा; राज—राजा (तथा उसके भाइयों) की; योषितः—पत्नियों को; आश्वास्य—आश्वासन देकर; भगवान्—भगवान्; लोक—समस्त लोकों के; भावनः—पोषणकर्ता; याम्—जो; आहुः—वे (वेदादि) आदेश देते हैं; लौकिकीम् संस्थाम्—लोकरीति, दाह-संस्कार; हतानाम्—मृतकों के लिए; समकारयत्—किये जाने की व्यवस्था की।

शुकदेव गोस्वामी ने कहा : रानियों को सान्त्वना देने के बाद समस्त जगतों के पालनकर्ता भगवान् कृष्ण ने नियत दाह-संस्कार सम्पन्न किये जाने की व्यवस्था की।

मातरं पितरं चैव मोचयित्वाथ बन्धनात् ।
कृष्णरामौ ववन्दाते शिरसा स्पृश्य पादयोः ॥ ५० ॥

शब्दार्थ

मातरम्—अपनी माता को; पितरम्—पिता को; च—तथा; एव—भी; मोचयित्वा—छुड़ाकर; अथ—तब; बन्धनात्—हथकड़ी, बेड़ी से; कृष्ण-रामौ—कृष्ण तथा बलराम ने; ववन्दाते—नमस्कार किया; शिरसा—सिर से; स्पृश्य—छूकर; पादयोः—उनके पैर।

तत्पश्चात् कृष्ण तथा बलराम ने अपने माता-पिता को बन्धन से छुड़ाया और अपने सिर से उनके पैरों को छूकर उन्हें नमस्कार किया।

देवकी वसुदेवश्च विज्ञाय जगदीश्वरौ ।
कृतसंवन्दनौ पुत्रौ सस्वजाते न शङ्कितौ ॥ ५१ ॥

शब्दार्थ

देवकी—देवकी; वसुदेवः—वसुदेव; च—तथा; विज्ञाय—पहचान कर; जगत्—ब्रह्माण्ड के; ईश्वरौ—दो ईश्वरों के रूप में; कृत—किया गया; संवन्दनौ—हाथ जोड़कर की गई वन्दना; पुत्रौ—अपने दोनों पुत्रों को; सस्वजाते न—आलिंगन नहीं किया; शङ्कितौ—शंकालु।

अब कृष्ण तथा बलराम को ब्रह्माण्ड के विभुओं के रूप में जानकर देवकी तथा वसुदेव केवल हाथ जोड़े खड़े रहे। शंकित होने के कारण उन्होंने अपने पुत्रों का आलिंगन नहीं किया।

इस प्रकार श्रीमद्भागवत के दसवें स्कंध के अन्तर्गत ''कंस वध'' नामक चवालीसवें अध्याय के श्री श्रीमद् ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद के विनीत सेवकों द्वारा रचित तात्पर्य पूर्ण हुए।